योग की परिभाषा एवं परिचय

पन्नाबेन एस. ठक्कर
पीएच.डी. स्कॉलर,
पेसिफिक युनिवर्सिटी, राजस्थान

१. प्रस्तावना

संसार दु:ख रुप है । उसका कारण सांसारिक विषयों की परिणाम दु:खता, ताप दु:खता एवं संस्कार दु:खता है । विषयों को भोगते समय शरीर सुख मानता है । पर लोगों का परिणाम दु:खरुप ही होता है । भोगकाल के समय विषय सुख में राग और सुख के बाधकों पर द्वेष होता है । राग और द्वेष दु:खरूप जन्ममरण के चक्र को चालु रखते है और दूसरा विषय भोंगो की तृष्णा घटने की बजाय बढ़ती है । जो तृष्णा स्वयं दु:खरुप है । तीसरा विषयभोग के परिणाम अनेक रोगों का जन्म होता है । चौथा विषयों में परिणाम दु:खता और तापरुप दु:खता भी है । शत्रु, व्याधि, सर्पदंश, वगेरा विषयों में से जन्म लेने वाले लौकिक दु:खरुप है । और दुखानुभव से चित्त में कलेश होता है ।

योग के अभ्यास से उस प्रकार की शक्तियों का उदय होता है जिनको विभूति या सिद्धि कहते है । यदि पर्याप्त समय तक अभ्यास करने के बाद भी किसी मनुष्य में ऐसी असाधारण शक्तियों का आगम नहीं हुआ तो यह मानना चाहिए की वह ठीक मार्ग पर नहीं चल रहा है । परंतु सिद्धियाँ में कोई जादू की बात नहीं है । इन्द्रियों की शक्ति बहूत अधिक है । परंतु साधारणत: हमको उसका ज्ञान नहीं होता और न हम उसमें काम लेते है । अभ्यास को उस शक्ति का परिचय मिलता है उसको जगत के स्वरूप के सम्बन्ध में एसे अनुभव होते है जो दूसरों को प्राप्त नहीं है । दूर की या छिपी हुई वस्तु को देख लेना व्यवहत बातों को सुन लेना इत्यादि इन्द्रियाँ की सहज शक्ति की सीमा के भीतर की बातें है । परंतु साधारण मनुष्य के लिए यह आश्चर्य का विषय है इनको सिद्धि कहा जायेगा । इसी प्रकार मनुष्य में और भी बहुत सी शक्तियाँ है जो साधारण अवस्था में सुषुप्त रहति है। जो योग के अभ्यास से जाग उठती है । विद्यार्थी जीवन में भी विद्यार्थियाँ की द्वेष, तनाव, हताशा, नकारात्मकता जैसे भावों को नष्ट करने के लिए योग जरुरी है।

२. योग की परिभाषा

"योग शब्द संस्कृत धातु 'युज' से बना है । योग का अर्थ है जोडना । किसी भी कार्य में कुशलता प्राप्त करने के लिए शरीर को मन से तन और आत्मा से जोडना मतलब योग ।"

"योग: कर्मसु कौशलम्"

– श्रीमद् भगवद्गीता

"समत्वं योग उच्यते"

– श्रीमद् भगवद्गीता

जीवन के हरेक पडाव में समान स्थिति योग है ।

"दु:ख संयोग वियोग योगसंज्ञितम्"

– श्रीमद् भगवद्गीता

हरेक प्रकार के दु:ख में से मुक्ति का नाम योग है ।

"योग: समाधि:

– वेद व्यास

आत्मज्ञान प्राप्त करने की अवस्था योग है ।

"योगश्चितवृत्ति निरोध:"

– महर्षि पतंजलि

मन की विकृत्तियाँ का नाम योग है ।

जिन जिन उपायों से सद्गुणों की प्राप्ति होती है वो योग है ।

योग दिपक याने योग समाधि

कल्पवृक्ष से जैसे इच्छित वस्तुओं की प्राप्ति होती है । वैसे योग के आराधन से भी इच्छित वस्तुओं की प्राप्ति होती है । पृथ्वी में से जैसे अनेक प्रकार की वनस्पतियाँ निकलती है वैसे ही योगविद्या के आराधन से अनेक गुणों की प्राप्ति होती है । श्री विरप्रभु ने असंख्य योग में ज्ञान, दर्शन और चारित्र्य तीन योगों को मुख्य योग बताये है ।

गीता में श्री कृष्ण ने एक स्थल पर कहा है कि,

"योग: कर्मसु कौशलम्" कर्मों में कुशलता को योग कहते है । स्पष्ट है कि यह वाक्य योग की परिभाषा नहीं है । पर कुछ विद्वानों का यह मत है कि जीवात्मा और परमात्मा के मिल जाने को योग कहते है ।

३. योग का इतिहास

वैदिक संहिताओं के अंतर्गत तपस्वियों के बारे में (कल ब्राह्मण) प्राचीन काल से वेदों में (९०० से ५०० बी. सी. ई.) उल्लेख मिलता है जब की तापसिक साधनाओं का समावेश प्राचीन वैदिक टिप्पणियाँ में प्राप्त है कई मूर्तियाँ जो सामान्य योग का या समाधि मुद्रा को प्रदर्शित करती है । सिंधु घाटी सभ्यता (सी ३३००-१७०० बी. सी. ई.) के स्थान प्राप्त हुई है । पुरातत्वज्ञ ग्रेगरी पोस्सेइ के अनुसार "ये मूर्तियाँ योग के धार्मिक संस्कार" के योग से सम्बन्ध को संकेत करती है । यद्यपि इस बात का निर्णयात्मक सबूत नहीं है । फिर भी अनेक पंडितों की राय में सिंधु घाटी सभ्यता और योग ध्यान में सम्बन्ध है । ध्यान में उच्च चैतन्य को प्राप्त करने की रीतियाँ का विकास मानिक परम्पराओं द्वारा एवं उपनिषद् की परंपरा द्वारा

विकसित हुआ था । बुद्ध के पूर्व एवं प्राचीन ब्राह्मिनिक ग्रंथों में ध्यान के बारे में कोई ठोस सबूत नहीं मिलता है । बुद्ध के दो शिक्षकों के ध्यान के लक्ष्यों की प्रति कई वाक्यों के आधार पर वरनी यह तर्क करते है कि निर्गुण ध्यान की पद्धति ब्राह्मिन परंपरा से निकली इसलिए उपनिषद् की सृष्टि के प्रति कई कथनों में एवं ध्यान के लक्ष्यों के लिए कई कथनों में समानता है ।

४. योग का लक्ष्य

योग का लक्ष्य स्वास्थ्य में सुधार से लेकर मोक्ष प्राप्त करने तक है । जैन धर्म अद्वैत वेदांत के मोनिस्ट संप्रदाय और शैवत्व के अन्तर में योग का लक्ष्य मोक्ष का रुप लेता है झो सभी सांसारिक कष्ट एवं जन्म और मृत्यु के उपर मुक्ति प्राप्त करता है । उस क्षण में परमब्रह्म के साथ समरुपता प्राप्त करता है ।

४.१ महाभारत में योग

महाभारत मं योग का अर्थ जीव और ब्रह्म का संयोग है । इसमें निष्काम योग, कर्मयोग, भक्तियोग, ज्ञानयोग, यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान, समाधि आदि का वर्तन है । इन सभी में ज्ञान योग को मोक्ष प्राप्ति का एक मात्र साधन यहीं है । भक्ति योग को जीव ब्रह्म मिलन का मार्ग बताया गया है ।

४.२ *वेदों में योग*

वेदों में योग के विषय का विवेचन किया गया है । ऋग्वेद के अनुसार विद्वानों का कोई भी यह कर्म योग के बिना सिद्ध नहीं होता है ।

४.३ गीता में योग

गीता में मानव कल्याण हेतु व्यावहारिक पक्ष रखते हुए कहा गया है की इसके द्वारा कोई भी सम्प्रदाय या धर्म का व्यक्ति जीवन की पूर्मता का लाभ लेकर लगभग सभी समस्यायें सलुझा सकता है । योग ऐसा जीवन दर्शन है जिसमें हम संसार से विरक्त हुये बिना सामाजिक कर्म करते हुये जीवन के सभी सर्वोत्तम लक्ष्य प्राप्त कर कर्मदोष रहित और प्रभावी बनाने का मार्ग प्रशस्त कर सकते है ।

तपस्विभ्योऽधिको योगी ज्ञानिभ्योऽपि मतोऽधिकः ।
कर्मिभ्यश्चाधितो योगी, तस्मायोगी भवार्जुनः ॥१॥
प्रयत्नाद्यतमानस्तु, योगी संशुद्धकिल्विषः ।
अनेक जन्मसंसिद्धि-सीतो यादि परां गतिम् ॥२॥
असंचतालना योगो, दुष्प्राय इति में मतिः ।
वश्यात्मना तु पतता, शक्योऽवाप्नुमुपायतः ॥३॥
युत्काहार विहारस्य, युत्कचेष्टस्य कर्मसु ।
युक्त स्वप्नाव बाधस्य, योगो भवति दुःखहा ॥५॥

— भगवद्गीता अध्याय-६

गीता का पहला चरण योग द्वारा भयमुक्त होकर असीम बल प्राप्त करना है । दूसरे चरण में इसके द्वारा कर्म की सफलता या असफलता के संश्य से मुक्ति का वर्णन है । तीसरा चरण बुद्धि का एकाग्र होना है । चौथा चरण इन्द्रियस्वरुपी घोडों का बुद्धिरूपी सारथी, मनरुपी लगाम लगाकर, नियमन कर लेना है । पाँचवा चरण आत्म चिंतन, प्राणी अकेला, एकान्त में एकचित होकर आत्मा का संयम कर एवं किसी भी काम वासना को न रख निरन्तर अपने योगाभ्यास में लग रहे । सामाजिकता के सन्दर्भ में भी गीता में समाज योग का वर्णन किया गया है ।

४.४ उपनिषदों में योग

सभी उपनिषदों में किसी न किसी रूप में योग का उल्लेख किया गया है । इनमें योग को प्रमुखता दी गई है । योग को मुक्ति प्राप्ति का साधन एवं पराभक्ति के समान ही साधन माना गया है । श्वेताश्वतरोपनिषद् में प्राणायाम नदियाँ का वर्णन, ध्यान एवं उसके साधन आदि योग क्रियाओं का विवेचन किया गया है । कुछ उपनिषद् जिनमें केवल योग का ही वर्णन किय गया है । उनके नाम योग उपनिषद् ही है । जिनकी संख्या २१ है । ये निम्न है –

१. उदयतारकापनिषद्	२. अमृतनादोपनिषद्	३. अमृतबिन्दुपनिषद्	४. मुक्तिकापनिषद्
५. तेजोबिन्दुपनिषद्	६. त्रिशिखाब्रत्मिजोपनिषद्	७. दर्शनोपनिषद्	८. ध्यानबिन्दुपनिषद्
९. पाशुपतब्रह्मपनिषद्	१०. नादबिन्दुपनिषद्	११. ब्रह्मविद्यापनिषद्	१२.मण्डलब्राह्मजोपनिषद्
१३. महावाक्योपनिषद्	१४. योगकुण्डल्योपनिषद्	१५. योगचूडामण्युपनिषद्	
१६.योगतत्वोपनिषद्	१७. योगशिखापनिषद्	१८. वराहोपनिषद्	
१९. शाण्डिल्योपनिषद्	२०. हंशोपनिषद्	२१ .योगराजोपनिषद्	

उपरोक्त में 'योगराजोपनिषद्' अप्रकाशित है ।

४.५ पुराणमें योग

पुराणों में कर्मयोग, भक्तियोग तथा ज्ञान योग का वर्णन है । इनमें ब्रह्म प्राप्ति के लिए आठ अंगो का वर्णन किया गया है ।

४.६ श्रीमद् भागवत् में योग

श्रीमद् भागवद् में यम नियम, आसन, प्राणायम, धारणा, समाधि का अनेक स्थानों पर विवेचन किया गया है । अनेक स्थळों पर आसन योग द्वारा शरीर त्यागने का समाधि द्वारा देह त्याग करने का प्राणायाम द्वारा मन को दूर कर एकाग्र चित्त होकर परमात्मा का ध्यान करने आदि का वर्णन आया है ।

४.७ बौद्ध दर्शन में योग

बौद्ध दर्शन का उद्देश्य दु:ख से निवृत्ति प्राप्त करने के फलस्वरुप हुआ है । बौद्धों में राजयोग और हठयोग की साधना की जाती है ।

४.८ जैन दर्शन में योग

जैन शब्द की व्युत्पत्ति 'जिन' से मानी जाती है । जिसका अर्थ है 'विजेता' अर्थात् वे व्यक्ति जिन्होंने अपने जीवन में मन एवं कामनाओं पर विजय प्राप्त करके सदा के लिए आवागमन चक्र से मुक्ति प्राप्त करती है । जैन दर्शन में कहा है की एकाग्रता पूर्वक चिंता का निरोध होना ही ध्यान है ।

५. *पतंजलि योग सूत्र*

योग सूत्र के प्रणेता भगवान 'पतंजलि' है उनके सूत्र 'अथयोगानुशासनम्' ने यह सिद्ध किया कि योग विद्या आदि काल से चली आ रही है । पतंजलि ने अति प्राचीन योग 'हिरण्यगर्भ योगशास्त्र' का ही सार ग्रहण करके योग सूत्रों की रचना की है एसा मानना योग गुरुओं का है । अष्टांग योग के तृतीय अंग 'आसन' के सम्बन्ध में महर्षि पतंजलि कहते है कि –

"स्थिर सुख आसनम्"

'अष्टांग योग' के चतुर्थ अंग 'प्रत्याहार' के सम्बन्ध में (सर्वपल्ली डॉ. राधाकृष्णन्) के अनुसार – "प्रत्याहार अथवा इन्द्रियाँ को बाहर की उनकी प्राकृतिक क्रियाओं से हटा लेना आधुनिक मनोविज्ञान की अन्तर्मुखता की प्रक्रिया के अनुरुप है ।"

पतंजलि के अष्टांग योग के प्रथम सूत्र ("अहिंसा सत्यास्तेन ब्रह्माचरिग्रहा यमाः") के अनुसार अहिंसा (हिंसा न करना, सत्य (सच्चाई) अस्तेन (चोरी न करना), ब्रह्मचर्य (इन्द्रियदमन) तथा अपरिग्रह (लोभ न करना) आदि उद्देश्य समाज और व्यक्ति के लिए नैतिक नियम है । महादेव देसाई ने अपनी पुस्तक 'Gita according to Gandhi' की भूमिका में लिखा है कि शरीर, मन और आत्मा की शक्तियाँ को परमात्मा में संयोजन करना योग है ।

५.१ इस्लाम में योग

सूफी संगीत के विकास में भारतीय योग अभ्यास का काफी प्रभाव है ।

५.२ ईसाई धर्म में योग

सन् १९८९ में वैटिकन ने घोषित किया की जैन और योग जैसे पूर्वोधान प्रथाओं शरीर के एक गूट में बदलाव हो सकते है ।

५.३ स्मृति ग्रंथों में योग

याज्ञवल्कय स्मृति, मनुस्मृति, पराशर् स्मृति इत्यादि स्मृति ग्रंथों में योगाभ्यास का उल्लेख है । जिससे आदमी मोक्ष प्राप्त कर सकता है । योग साधना के कर्तव्य एवं गृहस्थ संबंधी कार्यों की चर्चा भी स्मृति ग्रंथों में मिलती है । एम. बी. बुच ने 'Fifth Survey of Education Research Vol-2' में योग अध्ययन का महत्त्व बतलाते लिखा है कि अध्यापक को न सिर्फ अपने विषय में पारंगत होना चाहिए, अपितु उसे

अध्यापन की विधियों एवं प्रविधियाँ तथा उन कारकों का भी ज्ञान होना चाहिए जो अध्यापन को प्रभावित करते है ।

- He made an attempt to study whether Jap and Yog Practicing and non-practising subjects differ in their personality dimension.
- A majority of Yoga - practising subjects showed extra predictive reactions.
- Yoga and non-yoga practicing subject did not differ significantly in their reactions to frustration.
- On group conformity ratings, the two groups did not differ.

डॉ. राधाकृष्णन के अनुसार, ''स्वस्थ शरीर में ही स्वस्थ मस्तिष्क का निर्माण होता है'' अतः विद्यार्थियाँ के सर्वांगीण विकास हेतु योग कराया जाय । श्री अरविंद ने कहा है प्रत्येक आचार्य को योग सम्बन्धी ज्ञान होना चाहिए, जिससे कि वह योग और शिक्षा में सम्बन्ध स्थापित कर सके । आचार्य विनोबा भावे भी योग और शिक्षा में गहरा सम्बन्ध मानते थे । योग, उद्योग और सहयोग को वो शिक्षणत्रयी कहते थे ।

सन्दर्भ सूचि

१. भानुविजयजी महाराज (१९६८). श्री पातंजल योगदर्शन, पाटन ।
२. चिदानंद सरस्वती (१९६८). योगासन मार्गदर्शिका, दिव्य जीवन संघ,भावनगर ।
३. श्रीमद् बुद्धिसागर सुरीश्वरजी महाराज (१९८९). योग दीपक याने योग समाधि, श्री अध्यात्म ज्ञान प्रसारण मंडल, बम्बई ।
४. शाह, नगीन जी. (१९७३). सांख्य योग, श्री रामानंद प्रिन्टिग प्रेस, कांकरिया रोड, अहमदाबाद ।
५. भट्ट, सुभाष (१९९८). ध्यान और योग की सहजयात्रा, नडीयाद लाइफ कोर्स पब्लीकेशन, नडीयाद।
६. योगानंद (१९९६). प्राणक्षणु और स्पंदन, योगानंद प्रकाशन, गांधीनगर ।
७. स्वामी, रामदेव (२००५). योग साधना और योग चिकित्सा रहस्य, दिव्य योग मंदिर ट्रस्ट, कनखल, हरिद्वार ।